तृतीय अध्याय–

साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में चित्रित छात्रांदोलन.

1. "पक्षधर"–विश्वंभरनाथ उपाध्याय, 1971
2. "गली आगे मुडती हैं"–शिवप्रसाद सिंह, 1974
3. "अपना मोर्चा"–काशीनाथ सिंह 1972
4. "नौजवान" भैरवप्रसाद गुप्त, 1972
5. लाल–पीली जमीन–गोविंद मिश्र, 1976
6. उखडी हुई आँधी, –सुदर्शन मजीठिया 1979

– तृतीय अध्याय –

साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में चित्रित छात्रआंदोलन

आजादी के पश्चात राजनीति और शासन तंत्र मे परिवर्तन हुआ समाजवादी समाज रचना की प्रतिष्ठापना हुआ। प्रजातंत्रीय व्यवस्था में अपने हक्कों और कर्तव्यों के प्रति जनमानस में सतर्कता पैदा हुआ। शासन एवं शासक की अन्यायी एवं अत्याचारी प्रवृत्ति के खिलाफ आंदोलनों की मात्रा बलवती होती गयी। जन आंदोलन की संगठित शक्ति ने पराधीनता की शृंखलाओं को तोड दिया। " आज आजाद भारत भूमि में सरकार की अन्यायी प्रवृत्ति के साथ संघर्ष करके सरकार को ठिकाने पर लाने का काम और सरकार को कार्य प्रवृत्त बनाने के लिए आंदोलन ही प्रभावी अस्त्र रहा है।"[1] सन 1960 के पश्चात आंदोलन की समस्या ने विविध रुप धारण किये। युवाछात्र आंदोलन, कृषक आंदोलन, छात्र आंदोलन आदि विविध मुखी जन आंदोलन इस भारत भूमि में देखने को मिलते हैं। प्रस्तुत अध्याय में हम सिर्फ छात्र आंदोलनपर सोचेंगे।

आज भारतीय युवा–छात्र–शक्ति मानसिकता से कुंठित होती जा रही है। स्वतंत्र भारत की आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों ने युवा–छात्र शक्ति को अराजक और स्मशानसेवी बनने को मजबूर किया है। इस स्थिति में छात्रशक्ति गुमराह बनती जा रही है। इस स्थिति में नशीली वस्तुओं का प्राशन करना युवा–छात्र शक्ति का परम कर्तव्य बन गया है। आज के समाज की सांस्कृतिक, वैचारिक सैद्धांतिक गिरावट के कारण आज की युवा–छात्र–पीढी आक्रोश से भर उठी है। आक्रोशजन्य युवा पीढी क्रांतिकारी बनती जा रही है। छात्रशक्ति आत्मविभाजित होकर सामाजिक गतिविधियों से हटकर नीड–सेवी बन रही है। आत्मविभाजित छात्र शक्ति सामाजिक परिवेश के साथ समझौता करने को तैयार हो रही है। छात्र–शक्ति के साहसीक और रचनात्मक मानस को यथास्थितिवादी शक्तियों ने खूब ढंडा बना दिया है। डॉ.वाय.बी.धुमालजी के मतानुसार – "आज की छात्र–शक्ति भविष्य से खूब उदास और वर्तमान से बेहद खीज गयी है। युवा–छात्र शक्ति के पास रचनात्मक उर्जा होने के कारण वह अच्छे भविष्यत की कामना करती है परंतु आज यह शक्ति अन्यायी और आततायी परिस्थितियों से घिरने के कारण आक्रामक या विद्रोही हो गयी है। वह छात्रशक्ति अपने अधिकारों से वंचित होने के नाते आक्रोश से भर उठी है।"[2]

आज छात्र शक्ति को शासनतंत्र की भयावह शक्ति से टकराना पडता है, इस हालत में कभी-कभी छात्रशक्ति अकेली पड जाती है, और उसे गहरी चोट पहुँचती है। उनके संघर्ष की धार बोथरी पडने लगती है। " इस स्थिति में यह शक्ति भीड बनती है या क्रोध से संपूर्ण सामाजिक प्रक्रिया से हट जाती है। इस शक्ति में विद्रोह की शक्ति नकारात्मक नहीं होती जब तक इस दृष्टि को सामाजिक मूल्य परकता से नहीं जोडा जाता तब तक यह शक्ति केवल निषेध को वरण करती है।

आज छात्रशक्ति आत्मकेंद्रितता की परिधि से घिरी है। छात्रशक्ति अपनी अस्मिता के इन्कारे जाने के विरुद्ध संघर्ष करना चाहती है, सुविध भोगी बनाना चाहती है। हम प्रस्तुत अध्याय में साठोत्तरी हिंदी के छात्र आंदोलन पर आधारित विश्वंभरनाथ उपाध्याय के "पक्षधर", 1971, काशिनाथ सिंह के "अपना मोर्चा", 1972, भैरवप्रसाद गुप्त के "नौजवान, 1972, शिवप्रसाद सिंह के "गली आगे मुडती है", 1974, गोविंद मिश्र के "लाल पीली जमीन", 1976, सुदर्शन मजीठिया के "उखडी हुई आंधी", 1979 आदि उपन्यासों का संक्षिप्त मे जिक्र प्रस्तुत करेंगे। इन उपन्यासों के साथ - साथ "कालेज स्ट्रीट के नये मसीहा" में बेकारी के कारण विद्रोही बनी छात्रशक्ति की सही दिशा की ओर संकेत किया गया है। "नई दिशा" यह उपन्यास भी इस दृष्टि से अपना महत्वपूर्ण योगदान निभा सकता है। यहाँ हम छात्र आंदोलन संबंधी महत्वपूर्ण उपन्यासों के आशयों को ही पेश करेंगे।

<u>पक्षधर विश्वंभरनाथ उपाध्याय, 1971</u> :

"पक्षधर" में छात्र शक्ति की गलत नीति एवं छात्रों का द्वारा नरसंहारों का चित्रण मिलता है। हर आंदोलन के पीछे स्वार्थी नीतियाँ छिपी हुई होती हैं, छात्र आंदोलन भी इसके लिए अपवाद नही हो सकता। मानवी प्रवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए अभिताभ कहता है - " सब चोर हैं। सब एक दूसरे का इस्तेमाल करना चाहते हैं। प्रोफेसर बलवीर, प्रोफसर डिसूजा को नीचा दिखाना चाहते हैं, तो डिसूजा बलवीर को। बलवीर समाजवादी तो डिसूजा जनतंत्री मुक्तसमाज के समर्थक। उपकुलपति अपना रंग चाहते हैं। लडकों को नौकरी चाहिए, फीस माफी चाहिए, लडकियाँ चाहिए, प्रमाणपत्र और सिफारिश.... हर आंदोलन सुविधाओं को हथियाकर खमोश हो जाता है। हम व्यवस्था से नहीं लड रहे है, व्यवस्था को सिर्फ नमनशील बना रहे है।"[3]

आज कल विश्वविद्यालयों में मौसम गरम नजर आते हैं। विश्वविद्यालय आंदोलन के अडड़े बने हैं वहाँ अग्निकाण्ड, तोड–फोड का बोलबाला है। "अभिताभ आंदोलन में पिटा गया, बलवीर और डिसूजा ने उपकुलपति के खिलाफ मिलकर हडताल करवा दी। एक प्रयोगशाला में आग लगा दी। रजिस्ट्रार के कार्यालय की तोड–फोड हुई। उपकुलपति के घर पर घिराव हुआ, परस्पर विरोधी राजनीतिक दलों ने अपने–अपने एजंट शिक्षकों और लडकों को संघर्ष में फेंक दिया। एक दो स्मशान यात्रा कर गये।"4/ प्रस्तुत उपन्यास में अभिताभ, चक्रधर और बेनीसिंह आंदोलनकारी छात्र हैं।

आंदोलनकारी युवक हमेशा सुविधाभोगियों के खिलाफ होते हैं। आचार्य के वक्तव्य पर व्यंग करते हुए संजय कहता है कि, –"..... आप प्रतिष्ठा का आधार अर्थ क्यों मानते हैं?" आप सुविधाएँ माँगिए। घर हो, शिक्षा निःशुल्क हो..... लेकिन आप लोग अपने में एक क्लास बन गये हैं। करोडों भूखों मर रहते हैं, और आप महंत हो गये हो। लोगों की इतनी अपेक्षा क्यों? 5"

आंदोलनकारी छात्र शक्ति आज की सामाजिक दशाओं को और अर्थ संस्कृति को उलट–पुलट कर देना चाहती है। गरीबों के लडके बडी तादाद में आज विश्वविद्यालयों में आते हैं वे अभिजात्य और अर्थ–वैषम्य को सहेंगे नही लेकिन उनके क्रोध को अपने हितो में लगा देना अध्यापकों का कार्य है। आर्थिक विषमता को मिटा देना छात्र आंदोलन का उद्‌देश्य है। दढियाल माशा पवन से कहता है– "क्रान्ति एक विसंगति को दूर कर दूसरी विसंगति उत्पन्न कर देती है। सामान्य जन क्रान्ति नहीं चाहता। वह अपने अभाव दूर करना चाहता है और अपना जीवन अपने ढंग से चलाना चाहता है।" 6 सामान्य व्यक्ति पहले रोटी माँगता है। छात्र इस विषमता को मिटाना चाहते हैं। मार्गव कहता है – " मै तो जनआंदोलन का पक्षधर हूँ। सेनाएँ बागियों को दबाएँगी। एक मरेगा दूसरा पैदा होगा। 7" अर्थात बागियों को मिटाना कठिण कर्म है। भार्गव जनसामान्य के पक्षधर हैं। छात्रों का आंदोलन क्रान्तिकारी बनकर हिंसक बन जाता है। संजय पक्षधर पत्रकारों, कामरेडों, शिक्षकों, पक्षधर साहित्यिको की एक संघर्ष समिती बना चुका था। डॉ.वाय्.बी. धुमालजी के मतानुसार -- "इस आंदोलन में तोड–फोड, अग्निवायु, विध्वंसकता देखने को मिलती है। यहाँ पोस्टरों की धूम मच रही है। पुलिस जीपों पर बम बरसना, मुखबिरों पर छूरे चलाना, अग्निकाण्ड शुरु होना, सत्ता समर्थकों की दूकाने लुटी जाना, सत्ता समर्थक अखबारों के कार्यालयों को घिराव डालना, सारे शहर पर आतंक छा जाना, युवा शक्ति द्वारा हो हल्ला मचाना,

सट्टा बाजार लूटे जाना, पुलिस थाने को जलाना, शत्रु की टोलियों द्वारा समर्पण करते रहना, लाशों का मेला लग जाना आदि घटनाओं से आंदोलनकारियों की विध्वसंक प्रवृत्तिपर प्रकश पडता है।[8]"

ये आंदोलनकारी पूँजीवादी शासन का नाश चाहते हैं क्रांतिकारियों की घोषणाओं से इस पर प्रकाश पडता है। जैसे "क्रान्ति अमर है, जनार्दन की जय हो, पूँजीवादी शासन का नाश हो, मुनाफे और लालच पर आधारित व्यवस्था बदल जाए। जनता जनार्दन झिंदाबाद।[9]"

प्रस्तुत उपन्यास में युवा-छात्र-शक्ति की गलत नीति एवं उनकेद्वारा होनेवाले नरसंहार का चित्रण देखने को मिलता है। इस उपन्यास की भाषा गहन और सांकेतिक है। इसमें मुहावरें, शास्त्रीय शब्दावली, और बिंब प्रतिक देखने को मिलते हैं। सांकेतिक भाषा की धारा में कथानक कहाँ और कैसे विखंडित होतो हैं, इसका पता नहीं लगता है। इसी से कथानक की परिवर्तित स्थितियों की पहचान पाठकों को समझ में नहीं आती।

इस उपन्यास की लडाई, अर्थसंस्कृति के खिलाफ है। इसमें विश्वविद्यालय में, गोष्टी में, कक्ष में, पार्क में और जंगल में हर जगह कृद्ध और विद्रोही गुरिल्ले व्यवस्था को परिवर्तन करने में सक्रीय है। प्रस्तुत उपन्यास में युद्ध के वर्णन से अधिक उसके प्रभावों पर अधिक प्रकाश डाला गया है।

इस उपन्यास का आरंभ घोषणाबाजी के विरुद्ध जेहाद से होता है। जिसका नायक माशा है। भारत की सभा योजना और उसकी मानसिक विस्फोटक स्थिती के कारण आगे की लडाई का स्वरुप स्पष्ट होता है। अंडरग्राऊण्ड माशा पकडा जाता है। उसे आंदोलन का भेद बताने के लिए खूब पीडा दी जाती है परंतु भेद खुल जाने के पहले ही गुरिल्ला द्वारा माशा को बडे साहस के साथ उडा किया जाता है। माशा फिर मुनीर जैसे गुंडे की सहायता से सेना के विरोध में मोर्चा बनाता है। गुरिल्लों के साथ प्रमुख गुंडे, छात्र, मजदूर, अध्यापक, साहित्यिक आदि सभी जुड जाते हैं और उनके "पक्षधर बनते है। परिणाम स्वरुप गलियों में, गावों में, शहरों में आदि सभी जगहों पर लडाई की तैयारियाँ शुरु हो जाती है। पक्षधर अपने कामों में सफल बनते हैं। उपन्यास के पात्रो में जनार्दन, माशा, तृप्ता, इंदिवर, अभिताभ और जुगींदर, जंगली बाबा आदि सभी पक्षधरों के नेता हैं।

प्रस्तुत उपन्यास में कवि, पत्रकार, उपन्यासकार, नाटककार आदि बुद्धजीवी वर्ग आतंकवादी मोर्चे के संदर्भ में आपस में टकराते हैं और उपन्यास में बौद्धिकतापूर्ण हलचलें पैदा होती हैं। अंत में "पक्षधर" उपन्यास अराजक आदर्शवाद की स्थापना में कल्पित होकर हल्का बन जाता है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत उपन्यासों में लेखकने नरसंहारक छात्रशक्तिपर प्रकाश डाला है। इसे विनाशकारी आंदोलन कहा है। ऐसे आंदोलन के लिए जिम्मेदार मूल्यों पर भी सोचा है। भीड का बेकावू हो जाना, गरीब परव के द्वारा सेना को वापस भेजने की सूचना मुख्यमंत्री से देना, मुख्यमंत्री के द्वारा इस प्रस्ताव को टालने का प्रयत्न करते ही उनपर पथराव शुरु करना, बागियों के हाथ में आंदोलन की बागडोर का जाना, रेल - पटिरियों को तोडना-फोडना आदि घटनाएँ आंदोलनकारियों की हिंसात्मकता को उजागर करती हैं। हथियारों की फेका-फेकी शुरु हो जाना, लाशों के ढेर के ढेर लग जाना आदि घटनाएँ यहाँ आंदोलन की भयंकरता विशद करती है। दरवेश का प्रेम मानो बोल रहा था---- फरिश्तो! अब इन्कलाब तुम्हारे हाथों में सुपुर्द है। कॉमरेड कमांडर, असली जम्हूरियत की नींव का पत्थर, तरफदार गरीब गुरला की साँसों का सरताज पक्षधर जनार्दन शहीद हो गया। मेरे बच्चों खुदा का प्यारा बेटा हुसेन कुरबान हो गया। मिस राबर्टी साहिबा उसकी हमराह हुई दोस्तों, हम फिर मिलेंगे, हम --- फिर --- मिलेंगे। यहाँ शहीदों की नीति, आंदोलन की हिंसकता पर प्रकाश डाला गया है। यह आंदोलन सामाजिक होते हुए भी छात्र-शक्ति से जुडा हुआ है।

अपना मोर्चा – काशीनाथ सिहं, 1972 :

"अपना मोर्चा" कथाकार काशीनाथ सिंह का युवा–छात्र आंदोलन पर आधारित एक प्रामाणिक उपन्यास है। आजादी के आसपास पैदा हुए युवकों के द्वारा चलाये गये आंदोलन का चित्रण इस उपन्यास में आया है। कॅालेजों और विश्वविद्यालयों में अध्ययन करनेवाली युवा–छात्र पीढी किसतरह असंतोष, आक्रोश, दु:ख–दर्द, और अकेलेपन के साथ मौजुदा व्यवस्था के खिलाफ लड़ रही है, इसका चित्रण इस उपन्यास में किया है। सन 1967 ई. में संपूर्ण उत्तर भारत में हुए भाषा आंदोलन का नेतृत्व उत्तर प्रदेश के छात्र नेताओं ने किया था। काशीनाथ सिंह का कहना है कि, यह पहला वक्त था जब छात्र–शक्ति एक महत्वपूर्ण मसले पर संगठित हुअी थी। "अपना मोर्चा" के कथाकार के लिए छात्र और उनके आंदोलन तमाशा नहीं बल्कि उसके जीवन के अनिवार्य अंग रहे हैं।

1967 में विश्वविद्यालय में दो बातों को लेकर आंदोलन हुआ। उसमें पहिली बात यह है कि, हिंदी भाषा आंदोलन हुए जिसका नेतृत्व छात्र कर रहे थे। इसके बारे में स्वयं लेखक काशीनाथ सिंह का कथन है– "सन 67 ई. का हिंदी आंदोलन जिसका नेतृत्व समाजवादी युवाजन सभा के हाथों में था और दूसरा सन 71 ई. का विश्वविद्यालयीन, गृहयुध्द जो पहले की तुलना में कहीं ज्यादा जटिल और पेचिदा था। ऐसे तो मै दोनों आंदोलनों में किसी–न–किसी रुप में शामिल था लेकिन दूसरे आंदोलन में मेरी हिस्सेदारी मेरी नौकरी और मेरे शरीर के लिए खतरनाक हो चली थी। इसी आंदोलन में मैंने मानवतावादी पंडित अधिकापियों और खुशफहम गली यारों के सत्ता के राजमार्ग की ओर मुड़ते नंगे और बेपर्द होते हुए देखा है।"[10]

सिंहजी ने पारंपारिक कथा से हटकर यह उपन्यास लिखा है, पाठक और समीक्षकोंद्वारा इस उपन्यास को "नया उपन्यास" कहा है। इसके बारे में स्वयं काशीनाथ सिंह का कथन है– "अपना मोर्चा" के प्राय, सभी आलोचकों ने उसे हिंदी का "नया उपन्यास" कहा। मुझे कहने दें कि, वे गलत थे। मैंने सिर्फ कहानी कहने के उस आदिम तरीकें को फिर से जिंदा करनाचाहा था जिसे जैनेंद्र, अज्ञेय और बीच के दूसरे साहित्यिक कथाकार छोड चले थे। वह तरीका जो कहानी के जन्म के साथ हमारी जातीय विरासत रहा है और जिसकी आज सख्त जरुरत है।"[11] इसतरह इस उपन्यास में वर्तमान युवा विद्रोह तथा छात्र आंदोलन को विश्व विद्यालय विशेष के संदर्भ में रखकर यह उपन्यास न केवल एक नयी वस्तुस्थिति को सामने लाता है। बल्कि परंपरागत "कथा अवधारणा" की गंभीरता और गहराई के विरोध मे सतह के यथार्थ से जुडी एक नयी शिल्पविधि का इस्तेमाल भी करता है।

उपन्यास मं छात्रआंदोलन की स्थिति को बारीकी से देखा है। जब कुछ छात्र आंदोलन खडे करते है, तब अन्य छात्र सिर्फ उनकी मजा देखते हैं। जब कोई मजदूर आंदोलन करता है, तब अन्य लोग हंसकर उसका मजाक उड़ाते हैं। इसलिए आंदोलन असफलता बनते हैं। छात्रों के आंदोलन में अध्यापक भी संम्मिलित हैं, मगर अध्यापक भी छात्रों की ओर ध्यान-नहीं देते, उनसे दूर रहना पसंद करते हैं। प्रोफसर "राय" का मत है कि, छात्रों के आंदोलन के समय पुलिस द्वारा हुअी मारपीट की निंदा करनी चाहिए, हर गलत बात की हमें निंदा करनी चाहिए। लेकिन अन्य अध्यापक है, जो इस बात से सहमत नहीं हैं। वे छात्रों के आंदोलन के खिलाफ हैं और वे पुलिस को सही ठहराते हैं। अध्यक्ष कहते हैं,- "डाक्टर राय। यह राजनीतिक मसला है, और ऐसे मसलों से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं। आप ही बताइए और किसी विभाग ने इस तरह का वक्तव्य दिया है? किसी ने नहीं। यहाँ तक कि, कुलपति ने भी नहीं। वे तो इसी में खुश हैं कि, लडके मेरे नहीं, भाषा के खिलाफ आंदोलन कर रहे हैं। अब आप कहते है कि, आइए एक वक्तव्य दिया जाय। यह तो कुछ ऐसा ही कहना हुआ कि, आइए हम नौकरी से त्यागपत्र दें दे।"[12] कुछ अध्यापक कहते हैं कि, हम छात्रों की ओर से समर्थन देंगे तो हम मुसीबत में पडेंगे कारण छात्र हमारा साथ नहीं निभा देंगे।

विश्वविद्यालयीन छात्रों के आंदोलन को सही मार्गदर्शन न मिलने के कारण ये आंदोलन असफल बनते जा रहे हैं। इसपर इस उपन्यास में सोचा है। छात्रों को कम मेहनत में अधिक धन चाहिए। इसका कारण है गलत शिक्षा पध्दति। जिनके पास ज्यादा धन है वही लोग अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा दे सकते हैं।

परिणामतः योग्यता प्राप्त युवक छात्रों का मन अतृप्त होकर भटकने लगता है। मन की पूर्ति के लिए युवापीढी लैंगिकता, हिंसा एवं नशापान की ओर खींची जा रही है। आज युवापीढी को मन बहलाने के लिए "नशा" चाहिए। पश्चिमी संस्कृति और फैशन के नामपर शराब और संगीत की ओर युवापीढ़ी खींची जा रही है। शिक्षा व्यवस्था के साथ जुडा हुआ एक महत्वपूर्ण घटक है "अध्यापक" भी पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित हैं। वे भी भौतिक साधनों को पाने के लिए ज्यादा धन कमाने के लालच में अपना पेशा भी भूल चुके हैं। अमीर छात्रों से पैसे लेकर मार्कस बढ़ाना, गैरकार्य में साह्यक बनना आदि के लिए अध्यापक जरा भी नहीं हिचकिचाते। ज्यादा किताबें पढ़कर उच्च दर्जा का ज्ञान नहीं पाते बल्कि "गाईड" पढ़कर छात्रों को पढ़ाना और छात्र भी उसी के सहारे अंक पा रहे हैं। इस बात का कुछ भी असर अध्यापकों पर नहीं है। यही हमारे शिक्षा व्यवस्था की शोकांतिका है। युवापीढी में विचारों का अभाव है आदर्श मूल्यों का निर्माण नहीं है। आज

"चित्रपटों में लैंगिकता, हिंसा, नशापन अधिक मात्रा में देखने को मिलता है। इसी से युवापीढी गलत रास्तों पर चल रही है। इनका भविष्य अंधःकारमय हो रहा है।

"अपना मोर्चा" में छात्रों की समस्यापर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। उनको किसतरह सहायता और निर्देशन की आवश्यकता है, इसकी ओर संकेत किया है। साथ ही छात्रों के दुर्गणों का भी संकेत किया है। छात्रों में श्रम का अभाव है, अध्ययन की ओर देखने का नजरिया बदला हुआ है। छात्र जो समझ लेना चाहता वह उन्हें अध्ययन में नहीं मिल रहा। छात्र समझना चाहते है कि, – "मसलन, एक आदमी सारी जिंदगी जी तोड़ मेहनत करता है, – फिर भी गरीब ही क्यों रहता है? जब खाने को इतना मौजूद है तो लोग भूखों क्यों मरते हैं? जब सारा शहर रंग–बिरंगे कपडों से भरा पड़ा हैं, तो लोग नंगे क्यों हैं? जब इतना ज्ञान–इतनी किताबें हैं तो लोग जाहिल और मूर्ख क्यों है? जिसे सुख कहते हैं, वह क्या की है? यह कानून यह संविधान किसने बनाया है।"[13] इन सभी सवालों को समझ लेना चाहते हैं मगर इस शिक्षा से उन सवालों का जबाब नहीं मिलता इसके लिए छात्र त्रस्त हैं। वे अध्यापकों को कहते हैं जो हम पढ़ना नहीं चाहते वह हमें मत पढ़ाईये। गलत शिक्षा पध्दति में परिवर्तन आवश्यक है। जीने के लिए सिर्फ साहित्य पढ़कर काम चल नहीं सकता उसके लिए अनाज चाहिए, जो हमारी शिक्षा नहीं दे सकती। "वह मेरी समझ के बाहर है। समझ के बाहर इसलिए कि, चार साल के तजुर्बे के बाद मेरे लिए वह सब पढ़ने का तुक नहीं रह गया हैं। बेकार भी है वह मैं या कोइ भी यह जानकर क्या करेगा कि, अमुक विषय पर अमुक विद्वान ने क्या लिखा है?-- "[14] इन सभी बातों का बुरा असर छात्रोंपर पड़ रहा है परिणामतः छात्र अपना रास्ता भूल गये हैं, दिशाहिन भटक रहे हैं। अध्यापकों में अपने आप को श्रेष्ठ साबीत करने की होड लगी है। ताकि, अगली बार विभाग अध्यक्ष बनने का मौका मिले। विश्वविद्यालयों में एक से एक गहन समस्याएँ हैं, मगर उन समस्याओं की ओर किसी का ध्यान नहीं हैं उनकी ओर अनदेखा किया जाता है अपने नीजी स्वार्थ के लिए छात्रों के साथ ही देश का भविष्य बिगाड रहे है। भाषा का प्रश्न भी वैसा ही रहा है, छात्रोंद्वारा आंदोलन हो रहे हैं। अँग्रेजी भाषा के विरोध में आंदोलन करते है मगर वे अँग्रेजी संस्कृति से दूर नहीं हैं। आंदोलन को सही नेतृत्व नहीं है उसके साथ उनकी माँगें स्वयं के लिए है उसमें देश की सोच कम है। अपनी "सुविधा" या छूट के लिए छात्र आंदोलन करते हैं "अधिकारियों ने कहा कि, एम्.ए. में चालीस सीटें रहेंगी, नेता कहेगा – नहीं, साठ सीटें करो। अधिारियों ने कहा कि, प्रवेश के लिए कम से कम प्चास प्रतिशत अंक होने चाहिए। नेता कहेगा – नहीं छत्तीस प्रतिशत करो। अधिकारियों ने कहा कि, इम्तहान बीस मार्च से होगा, नेता कहेगा – नहीं, बीस मई करो। अधिकारियों ने कहा कि, कक्षा में उपस्थिति सत्तर प्रतिशत होनी चाहिए। नेता कहेगा – नहीं उपस्थिति की अनिवार्यता ही खत्म करो। हर मामले में छूट।"[15] निजी माँगें

ज्यादा होती है अगर माँगें पूरी नहीं हुओ तो आंदोलनको हिंसक दिशा मिलती है। ऐसे आंदोलनों को रुकवाने में पुलिस की सहयता ली जाती है। छात्रों की पिटाई होती, गिरफ्तारी होती है। सभी जगह कर्फ्यू लगाये जाते हैं। आंदोलन असफल होते हैं असफल आंदोलनें के कारणों की मीमंसा काशीनाथ सिंहजी ने प्रस्तुत उपन्यास में की है।

कॉलेजों की ओर देखने का लोगों का नजरिया बदल गया है। कॉलेज की स्थिति और विडंबना देखिए " हे बाप जान! अगर तुम्हारा लडका आवारा है, लकंगा है, कामचोर है, पूरे गाँव, घर का सिर दर्द है, सब मिला कर जहन्नुम है और तुम उससे अजिज आ गए हो तो एक काम करो उसे इसमें दाखिल कर दो!--- हे बबुआ अगर तुम गिरे आदमी हो, बेईमानी, घूसखोरी, धूर्तना, रौब, फैशन, चार सौ बीसी और चूतिया बनाने के हथकंडों को नहीं जानते तो इस आलीशान कारखाने में जाओ और अपनी किस्मत आजमाओ।"[16] उपन्यास में ज्वान के रुप में ये तीसरी आँख है जिसे स्थिति की विडम्बना की पूरी पहचान है। लेखक जिस सीमा तक उपन्यास में शामिल है, ज्वान उसी हद तक उपन्यास से दूर हे। "यह जवान वह "रजिस्टक कैरेक्टर" है जो यथार्थ की पहचान उसके खुरदरे पहले से कराता है।"[17]

" अपना मोर्चा" में छात्र आंदोलन की विफलता को छात्रों का संगठित और योजना बध्द ढंग से कार्य न कर सकना मुख्य माना है। ज्वान के मतानुसार आज के छात्र गुमराह होते जा रहे हैं। लडकियों को बहादुरी दिखना ही आंदोलन का उद्‌देश्य रहता है। ज्वान कहता है – "इनके लिए लडकियाँ ओढना टिकना हैं, जो भाषण देते हैं, या सडकपर चलते हैं या जुलुस निकालते हैं, तो लडकियों को दिखाने के लिए जिनकी हौस बंगला, अफसरी, मोटारकार, नौकर–चाकर, आराममतलबी और मौजमस्ती है। जिनका काम ही है, उन चीजों को बिना सोचे समझे खून–पसीना एक करके बनाता है, जो अपने गँवार बाप को बाबू कहने में हिचकिचाते हैं लेकिन उनकी कमाई को लूटने में नही शरमाते।"[18] यहाँ छात्रों की गलत नीति पर प्रकाश डाला है।

आंदोलन को हिंसक रुप मिलने के कारण छात्रों को छात्रावास छोडने का हुक्म मिलता है, विश्वविद्यालय बंद होते हैं। इन बातों को अध्यापक गलत ढंग से सोचते हैं। उनका कहना है कि – छात्रों के कारण चारों तरफ असुरक्षितता निर्माण हो रही है। लेकिन ये गलत है। छात्र सिर्फ भाषा के खिलाफ या छात्रों की समस्या के विरोध में आंदोलन नहीं करते बल्कि सामाजिक विषमता के खिलाफ भी लड़ना चाहते हैं। प्रारंभ में अहिंसात्मक आंदोलन अंत में हिसांत्मक बनते हैं।

भाषा विषयक स्पष्टीकरण करते हुए वह नेता कहता है – भाषा का अर्थ या अंग्रजी नहीं। भाषा का अर्थ है जीने की पध्दति, जीने का ढंग। भाषा याने जनतंत्र की भाषा, जनतांत्रिक अधिकारों की भाषा आजादी और सुखी जिंदगी की भाषा। हम जीने के इस तौर तरीकों के लिए लड रहे हैं। अगर ऐसा नहीं करेंगे तो हम अपनी जमीन को धोखा देंगे। यह आंदोलन सरकारी हुकुमत की भाषा के खिलाफ है, छात्र इस हुकुमती भाषा पर अपनी भाषा थोंपना चाहते हैं। "हिंदी उपन्यास ने समसामायिक आंदोलनों की गतिविधि ओर उनके आकलन आदि में भी रुचि प्रदर्शित की। काशीनाथ सिंह का रिपोर्तज शैली का लघु–उपन्यास 'अपना मोर्चा', सन 1967 में हुए छात्र आंदोलन का आधार लेकर ही रचा गया लोकप्रिय भी हुआ।"[19]

निष्कर्ष :

"अपना मोर्चा" काशीनाथ सिंह का छात्र आंदोलन पर लिखा हुआ एक सफल उपन्यास है। छात्र आंदोलन की सफलता – असफलता, सार्थकता–निरर्थकता और उद्‌देश्य विहिनता को केंद्र में रखा गया है। छात्र आंदोलन की विविध शक्लों की पहचान का प्रयास किया है। छात्र आंदोलन पर लिखा हुआ यह एक सशक्त उपन्यास है। आजादी के बाद बढ़ती हुई छात्रों की संख्या, शिक्षा प्रणालीपर लगाया गया प्रश्नचिन्ह, शिक्षा प्रणाली का सदोष होना, अयोग्य लोगों को अध्यापन कार्य में जुटाना जिसकी कहीं और उपज नहीं/ आज़ादी के बाद निर्मित छात्र आंदोलन की गलत दिशा पर इस उपन्यास में प्रकाश डाला है।

नौजवान – भैरवप्रसाद गुप्त – 1972 :

"नौजवान" भैरवप्रसाद गुप्त का सन 1972 में प्रकाशित प्रगतिवादी उपन्यास है।

उपन्यास में लेखकने योगेशद्वारा चलाये गये छात्र आंदोलन का खुलकर चित्रण किया है। बेकारी, अनुपयोगी शिक्षा प्रणाली, पंच वर्षीय योजना, आर्थिक विकास, छात्र कल्याणकार्य की पध्दति, पाठयक्रम तथा शिक्षा एवं परीक्षा पध्दति के दोष दिखाने का प्रयास लेखक ने यहाँ किया है।

भरत गाँव में रहनेवाला एक सीधा नौजवान, सामान्य परिस्थिति में पला युवक है। स्कूल की पढ़ाई खत्म होने के बाद इच्छा न होने पर भी भरत को आगे की पढ़ाई के लिए शहर जाना पड़ता है। उसके पितजी उसमें मानवतावादी और राष्ट्रप्रेम की प्रवृत्ति को जगाने के लिए कहते हैं – "बेटा, तुम्हारा यह जीवन केवल अपने लिए, अपने माँ–बाप के लिए ही नहीं है, बल्कि संपूर्ण देश

के लिए है। संपूर्ण देश के लिए ही क्यों, संपूर्ण विश्व के लिए है, सम्पूर्ण मानवता के लिए है।[20] साथ ही वे उसे गौतम, राम, गांधी आदि की महानता का परिचय देकर उनके पिता यह समझाते है कि, आग में तपकर सोना होता है, उसी तरह मनुष्य कष्टों को झेलकर सोने की तरह महान बनता है। घर की आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण वह वजीफा पाकर पढ़ाई करता है। कॉलेज में उसकी पहचान छात्र संगठन का पदाधिकारी योगेश के साथ होती है।

योगेश और भरत में गहरी दोस्ती हो जाती है। योगेश के साथ भरत भी सभा और मार्चोआं में शरीफ होने लगता है। "युवा मानस" के रुप में नयी पीढी का अभ्युद्य हो रहा है। असंतोष के कारण इनमें विद्रोह की भावना व्याप्त होने लगी है। आज युवा पीढी के युवकों में पुरानी पीढी के दकियानुसी विचारों के प्रति असंतोष, सामाजिक मान्यताओं, रुढियों और परंपराओं तथा प्रचलित पूरानी शिक्षा पध्दति, साथ–ही–साथ विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के प्रबंधकों के तानाशाही व्यवहारों के प्रति महत् आक्रोश और विद्रोह छा रहा है। इसी छात्र विद्रोह को भैरवप्रसादजीने इस उपन्यास में प्रस्तुत किया है।

आज की शिक्षा व्यवस्था सिर्फ पूंजीपतियों के लिए ही खुली है। निर्धन छात्रों को चाहकर भी शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश नहीं मिलता है। शिक्षा के लिए दस प्रतिशत खर्चा होता है, मगर नब्बे प्रतिशत डोनेशन के रुप में लिये जाते हैं जो कि, भरत जैसे छात्र नहीं दे सकते। भैरवप्रसाद भरत के द्वारा ऐसे छात्रों की दयनीय स्थिति को प्रस्तुत करते हैं। भरत विश्वविद्यालयों में तो जाता है, मगर उसे पूंजीवादी सरकार और पुलिस के साथ संघर्ष करना पड़ता है। हमारी शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य करते हुए छात्रोंद्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी हैं कि, "विद्यार्थियों की संख्या के मुकाबले अध्यापकों की संख्या अनुपातत: कम है। परिणामस्वरुप एक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत रुप से अध्यापक उतना ध्यान नहीं दे पाता जितना आवश्यक है, और विद्यार्थी उस व्यापक शिक्षा दिक्षा से वंचित रह जाता है, जो उच्च स्तरीय शिक्षा के लिए आवश्यक है। ---- विश्वविद्यालयों में अच्छे पुस्तकालय नहीं है --- पुस्तकालय विश्वविद्यालय का मानस है, क्यों कि, एक सुव्यवस्थित अद्यतन पुस्तकालय के बिना शास्त्रीय अध्ययन और खोज असंभव है।"[21]

शिक्षा व्यवस्था में आज पूंजीवाद आ पहुँचा है। आज की शिक्षा परीक्षा भिमुख बन बैठी है। इसमें एक निश्चित पाठयक्रम रहता है। अध्यापक भी सिर्फ उसी पाठयक्रम पर ध्यान देते हैं। उसी पाठयक्रम को सामने रखकर अध्यापन का काम करते हैं।

अध्यापक . इन किताबों तक ही सीमित रहते हैं। पाठयक्रमों की व्यापकतापर ध्यान नहीं दिया जाता। ज्यादात्तर पाठयक्रम प्राप्त किताबों के शीर्षकों से अथवा उसमें थोडा परिवर्तन करके बनाये जाते हैं, उसी किताबों को पढाने की शिफारिश अध्यापकों को की जाती है।

शिक्षा व्यवस्था और पाठयक्रमों से भी हमारी परीक्षा पध्दति दोषपूर्ण है। बल्कि यह कहना अधिक सही होगा कि, ये दोषपूर्ण परीक्षा पध्दति ही हमारे पाठयक्रमों के दोषों को और बढ़ा देती है। सालभर में एक या दो बार परीक्षायें होती हैं, जिसमें छात्र उसीसमय के लिए ज्यादा अध्ययन करके या अध्ययन नहीं हुआ तो अन्य मार्ग से परीक्षा देते हैं। ज्यादा-से-ज्यादा अंक पाने की कोशिश करते हैं। इन परीक्षाओं के परिणामों पर ही छात्रों की योग्यता नापी जाती है जो सरासर गलत है।

छात्र कल्याण के लिए विश्वविद्यालयों में छात्र-कल्याण-समीति का निर्माण किया जाता है लेकिन छात्रों के कल्याणकार्योंपर कोई ध्यान नहीं देता है। विश्वविद्यालयों के स्वायतता की अनेकसी बातें की जाती है, नये-नये विश्वविद्यालयों और कॉलेजों को खोलने की आये दिन माँगें की जाती हैं, मगर छात्रों के मनोरंजन का कोई विचार नहीं होता उसपर कोई ध्यान नहीं देता। "राधाकृष्णन आयोग के शिफारिश के अनुसार कई विश्वविद्यालयों में "छात्र कल्याण अधिष्ठाता" के कार्यालयों की स्थापना भी की गयी है, मगर छात्रों के लिए वह समीति कुछ भी नहीं कर सकती। वह सिर्फ छात्रों कोरियायति रेल्वे टिकट दे सकी है।[22]

योगेश, भरत और अन्य छात्र सभी मिलकर छात्रों की माँगें पूरी करने के लिए उपकुलपति के निवासपर संयुक्त मोर्चा निकालते हैं, और नारे लगाते हैं - "छात्र एकता जिंदाबाद, छात्र युनियन जिंदाबाद। छात्रों की फीस वही रहेगी, वही रहेगी।" लेकिन इसी बीच पुलिस छात्रों का संगठन तोडने का प्रयास करती है। इसी बीच भरत पुलिस की लाठी से घायल होता है। छात्रों का घेरा तोडकर पुलिस जुलूसपर लाठियाँ बरसाने लगती है। योगेश कहता है - "असल में हम लोगों से बहुत बडी गलती हो गयी, आंदोलन शुरु होने से पहले ही सरकार ऐसी भयंकर क्रूरता सेविद्यार्थियों पर हमला करेगी, हमने सोचा था कि, जूलूस शांतिपूर्ण ढंग से निकल जाएगा। उपकुलपति हमारा माँग-पत्र लेंगे और हमारी माँगों पर विचार करने का आश्वासन दे देंगे, लेकिन यहाँ तो पहले से ही सरकारने पूरी तैयारी कर ली थी।"[23] जुलूस उपकुलपति के निवास से दूर ही था कि, जुलूस को पुलिस ने घिराव डाला। घेरा तोडकर आंदोलनकारी आगे बढे ही रहे थे पुलिस ने पूरे जुलूसपर

लाठियाँ बरसानी शुरु कर दी। हमने सडक के दोनों ओर गलियों में घुसकर मोर्चेबंदी की और सडकपर लाठियाँ संभले खडी पुलिस भाग खडी हुई। पुलिस का तो अगला कार्यक्रम निश्चित था। वहाँ से हटकर पुलिस सीधे जुब्ली छात्रावासपर पहुँच गयी और वहाँ से उन्होंने हमला बोल दिया।

पुलिस अत्याचार, विश्वविद्यालयीन व्यवस्थापर विराजमान कुलपति का छात्रों की माँगों पर ध्यान न देना, इसी बातों से छात्र और संतत्प होते हैं, और आंदोलन अधिक तीव्र बन जाता है।

देश के सभी राजनीतिक दल अपने स्वार्थ के लिए छात्रों को अपनी ओर खींचने का प्रयास करते हैं। अपने को भावी कार्यकता, नेता बनने के लिए छात्रों को हाथिया लेते हैं। विश्वविद्यालयों में आंदोलन शुरु करना और इसमें छात्रों को खिंचना यह राजनीतिकदलों का एक विशेष अंग रहता है। ऐसे आंदोलनों से राष्ट्र की हानि होती है, शैक्षिक कार्य थम जाता है। छात्रों की माँगें भी तो पूरी नहीं होती, कुछ अन्य लाभ भी नहीं होते और राजनीतिक दलों को भी कुछ लाभ नहीं होत है। इससे केवल छात्रों को दिशाहीन बनाया जाता है।

सदोष और अनुपयोगी शिक्षा पध्दति से छात्रों को अनेक मुसीबतों से गुजरना पड़ता है। दिन-ब-दिन बेकारी की समस्या बढ़ती जा रही है। छात्र बेकारी से तंग आकर दिशाही भटकते रहते हैं। कुछ छात्र आत्महत्या के लिए प्रवृत्त होते है। शिक्षा का कुद उपयोग छात्रो को नहीं होता। सदोष शिक्षा के कारण बेकारी के चित्र को स्पष्ट करते हुए लेखक कहते हैं वस्तुतः हमारी इसी दोषपूर्ण वर्तमान शिक्षा-पध्दति से ही देश में दिनों - दिन शिक्षित बेकारों की संख्या अधिकधिक बढती जा रही है। लाखों पढे-लिखे युवक रोजगार के लिए मारे-मारे घुम रहे हैं, उनके समक्ष किसी एक निश्चित भविष्य के न होते तथा आजीविका के साधन उपलब्ध न होनेके कारण उनमें सरकार तथा प्रशासन के प्रति निरंतर विद्रोह बढ़ता जा रहा है।

दिन-प्रतिदिन बेकारी के कारण छात्रों में ज्ञान-विज्ञान के प्रति अरुचि भी बढ़ती जा रही है। उनका वैचारिक परिवेश निरंतर टूटता जा रहा है। छात्रों को आज सही मार्गदर्शन और सही नेतृत्व की आवश्यकता है। वास्तव में यह कहना गलत है कि, आज के युवा छात्र किन्हीं बाह्य कारणों से अथवा शक्तियों से प्रभावित और प्रेरित हैं। देश का वर्तमान दिशाहीन है बेकारी की समस्या ही वास्तव में इसके लिए उत्तरदायी है। बेकारी के कारण आक्रोश का पैदा होना स्वाभाविक है। उसके लिए वह पुलिस से भी हर समय मुठभेड के लिए तैयार रहता है। "अब यह सरकार बहुत दिन तक नहीं चल सकती। इसकी पुलिस सेना और पुलिस का आतंक लोगों के मन सेहट रहा है। लोग अब जगह-जगह उसे ललकारने लगे हैं। यह उसकी शक्ति के टूटने का चिन्ह है।"[24]

पुलिस अत्याचार, पूंजीपतियों का शिक्षा व्यवस्था में, हस्तक्षेप, उसके खिलाफ आंदोलन खडा करना ही यहाँ लेखक का प्रमुख उद्देश्य लगता है। पुलिस के अत्याचार को स्पष्ट करते हुए धर्मदेव कहता है – "जुलूस की रात पुलिस ने हमारे छात्रावास पर हमला किया था। मेरे कमरे में दो पुलिस घुस आये थे। मैं हबकाया उनकी ओर देख रहा था कि, एक ने मेरे सिरपर लाठी मार दी थी। मेरा सिर फट गया था। मुझे पुलिस ने क्यों मारा मेरी समझ में नहीं आता।"[25] धर्मदेव जैसे छात्रों पर पुलिस का हमला केवल छात्रों के प्रति अन्याय है।

उपन्यास के अंत में छात्र आंदोलन को दबाने की प्रतिक्रिया पर सोचते हुए लेखकने लिखा है " विश्वविद्यालय अनिश्चित कालतक बंद कर दिया गया। छात्रों का नेतृत्व करनेवाले योगेश को गोली का शिकार होने पर अस्पताल में भरती करवा दिया। इस स्थिति पर प्रकाश डालते हुए योगेश कहता है कि, "देश के नौजवानों ने अपनी, जिंदगी सवारने के लिए जो आंदोलन छेडा है, उसे यह बर्बर शक्ति से कुचल देंगे, हमारे मनोबल को तोड़ देंगे, ऐसा सोचना उसकी खामखयाली है। यह लड़ाई जारी रहेगी उससमय तक चलती रहे जब तक यह पूंजीवादी शिक्षा व्यवस्था समाप्त नहीं हो जाती।"[26]

पंजीवादी शक्तियों का विरोध आज हर जगह हो रहा है। योगेश अस्पताल में नर्स को समझाते हुए कहता है "क्या आपका यह खयाल हैं कि, हमारा यह आंदोलन सिर्फ विश्वविद्यालय और कॅालेजों के आहतों तक ही सीमित है? क्या आपके और इन मरीजों के बेटे-बेटियाँ, भाई-बहन नहीं है? नहीं सिस्टर नहीं, यह लडाई हर जगह लडी जा रही है--- स्कूलों में, कॅालेजों में, दफ्तरों में, कारखानों में, कचहरियों में, खेतों में बाजारों में, सडकोंपर --- यहाँ तक कि आपके अस्पतालों में भी -- पूंजीवाद का जाल कहाँ नहीं बिछा है, सिस्टर --- हमें इस जाल को हर जगह से टूकडे-टूकडे करके जला देना है। जब तक उस जाल को हम नहीं जला देंगे, तब तक न आप होंगी न इन मरीजों को ठिक दवा मिलेगी, न हमें सही पढ़ाई की सुविधा मिलेगी।"[27]

निष्कर्ष :

"नौजवान" गुप्तजी का छात्र आंदोलन पर प्रकाश डालनेवाला उपन्यास है। निम्न, मध्यवर्ग के नौजवानों के आर्थिक संघर्ष को यहाँ प्रस्तुत किया गया है। साथ ही शिक्षा, संघर्ष, समाज, छापामार युध्द आदि विषयों को साम्यवादी विचारों से प्रस्तुत किया है। बीच-बीच में लेनीन, राम, गांधी, गौतम जैसे महान ओर मानवतावादी व्यक्तियों के उदाहरण दिये हैं। जिसके कारण छात्रों में उचित परिवर्तन के सके। पूंजीपतियों की शोषण नीति से शिक्षा व्यवस्थामेंभी छूट नहीं पायी है।

यहाँ पूंजीवादी शिक्षा व्यवस्थापर लेकख ने व्यंग्य किया है।

"नौजवान' शिक्षा व्यवस्था मे निर्मित सामाजिक समस्या का चित्रण करता हैं। भरत के पिता उसे शहर में भेजते समय आदर्श युवक बनने का संदेश देते हैं। लेकिन आदर्शं युवक बनने के लिए निकला भरत सामने के आंदोलन, हड़ताल आदि के कारण आदर्श युवक नहीं बन सका और पिता के आदर्श के टूकड–टूकडे हो गये। अध्यापकों द्वारा छात्रों की अधिक गुण देने की प्रवृत्ति, निःशुल्क शिक्षा के नामपर बढ़ता शुल्क, क्रिडा–शुल्क, विद्युत–शुल्क, वाचनालय–शुल्क, भवन निर्माण–शुल्क आदि बातें पूंजीवादी शिक्षा व्यवस्था का नतिजा है। लेखक का कहना हैं कि, स्वतंत्रता के बाद हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार फैला हुआ है। इसी पूंजीपतीओं की शिक्षा–पध्दति को समाप्त करने के लिए छात्रोंद्वारा संघर्ष चलता रहता है। लेकिन जब तक पूंजीवादी शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन नहीं होगा तब तक इस पध्दतिमें परिवर्तन आना असंभव लगता है।

"नौजवान" में सन 1942 की घटना को प्रासंगिक रुप में चित्रित किया गया है। भरत के आदम्य साहस के दर्शन गुप्तजी ने हमें कराये हैं। योगेश जैसे छात्र के संपर्क में आने के कारण भरत जैसा सीधा–साधा छात्र भी क्रान्ति की तरफ कैसे मुड़ता हैं, यही दिखाना लेखक का प्रमुख उद्‌देश्य है। भैरवजीने यहाँ शिक्षा क्षेत्र की कमियाँ और पूंजीपति शिक्षा व्यवस्था पर व्यंग्य करके छात्र आंदोलन की आवश्यकता को अनिवार्य माना है। आज शिक्षालयों में फैले गंदे वातावरण को दूर करने के लिए छात्र आंदोलन, छात्र–संगठन अनिवार्य है परंतु छात्र–आंदोलन की दिशा सही होती चाहिए। इन आंदोलनों में विनाशकारी शक्तियों का प्रवेश होने पर छात्र आंदोलन कैसे गलत रास्ते पकडते हैं। इसपर भी लेखक ने संकेत किया है। भैरवजीने प्रस्तुत उपन्यास में अनुपयोगी शिक्षा व्यवस्थापर करारा व्यंग्य करके बेकारी की समस्या पर प्रकाश डाला है। अनुपयोगी शिक्षा व्यवस्था में छात्रों का गुमराह होना, शिक्षा व्यवस्था के प्रमुखों का शिक्षा व्यवस्था की तरफ दुर्लक्ष होना, परिणाम स्वरुप छात्र आंदोलन का सृजन होना आदि पर भैरवजीने यहाँ गहराई से सोचा है। आज छात्र–भारती, अखिल भारतीय छात्र संगठन आदि कअी छात्र संगठन छात्रोंकी समस्याओं पर आंदोलन खडे कर रहे हैं। शिक्षा क्षेत्र में चलनेवाली पूंजीवादी व्यवस्थाके खिलाफ ये संगठन लडरहे हैं।

गली आगे मुड़ती है – शिवप्रसाद सिंह – 1974

आज भारत के छात्रों की मानसिकता कुंठित होती जा रही है। आये दिन नयी–नयी समस्याओं से छात्रों को लडना पडता है। जिस उम्र मे उन्हें पढ़ाई करनी है, अपना भविष्य बनाना है उसी उम्र में उन्हें आंदोलन खडे करना पड़ रहा हैं। परिणामतः शिक्षा से प्राप्त ज्ञान से छात्र दूर चले जा रहे हैं। शिक्षा संस्थाओं की समस्याओं से लड़ते–लड़ते उनमें विद्रोह पैदा होता जा रहा है और अहिंसक छात्र भी हिंसा की ओर बढने लगे हैं। समाज के परंपरावादी लोग केवल छात्रों को दोषी मानते हैं इसीसे आंदोलनकारी छात्रों की प्रतिमा मैली बनती जा रही है।

युवा आक्रोश की नाना शक्लों को हमारे सामने लाने का प्रयास शिवप्रसाद सिंहजी ने "गली आगे मुड़ती है" में किया है। इस उपन्यास में लेखक काशी के संपूर्ण सांस्कृतिक बोध की पहचान करा देता है। इसमें युवाशक्ति की उर्जा या उसकी पस्त होती हुई मानसिकता पर भी लेखक ने गहराई से सोचा है। प्रस्तुत उपन्यास में युवा–शक्ति को क्रांतिकारी प्रवृत्ति और सामाजिक गतिविधियों से कटकर नीड–सेवी बनने की प्रवृत्ति पर प्रकाश डाला है। इसके उदाहरण रामानंद तिवारी की आत्म–भीरुता में तथा हरिमंगल के साहसी मिजाज में देखने को मिलते हैं। देबू और हरिमंगल इस बात पर जोर देते हैं कि, पुरानी पीढी की कशमकश और दूसरे को ठिक से न समझ पाना युवा विद्रोह के लिए विशेष रुप से जिम्मेदार है। युवापीढी अनुभव करती है कि, "उसके और पुरानी पीढी के बीच संवाद की स्थिति नहीं है, या ऐसा कोई सेतू नहीं है, जो उन दोनों को सम्पर्कित कर सके।"[28] बेरोजगारी और व्यवस्था द्वारा नियमों, मान्यताओ और लक्ष्मण रेखाओंके बुने माकडजाल को नकारती युवापीढी के अनेक संदर्भ इन उपन्यासों में उपलब्ध हैं। छात्र दो प्रकार के होते हैं, एक महत्वाकांक्षी और दूसरे हताकांक्षी । महत्वाकांक्षी वर्ग खुशामद और तिडकम के आधारपर येन–केन प्रकार से सफलता पाते हैं। मगर हताकांक्षी युवा कोल्हू के बैल की भांति जीवन के अभिशाप को ढोते हैं। ऐसे छात्रों में निम्न–वर्ग के युवकों की संख्या ज्यादा है।"श्रीकान्त" ऐसे ही छात्रों का उदाहरण है, जो असफलता के कारण पागल बना है। इसके साथ कलिजों में पढ़ रहे कुछ छात्र हैं जिनका संबंध सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों से है, वे भी युवक दिशाहीन विद्रोह और निरर्थक आक्रोश व्यक्त करते हैं। डॉ. प्रेमकुमार के मतानुसार – "युवा आक्रोश की सबसे बडी कमजोरी यह है कि, वह अदृश्य से टकराने का रास्ता नहीं जानता और उसीजगह किसी और को पकड़ लेता है, जो अदृश्य का स्थानापन्न बन जाता है।"[29] इसीकारण शहरों के रेल स्टेशन या पी. ए. सी. की सरकारी इमारतें युवा–आक्रोश का निशाना बनती हैं। उनके आंदोलनों और चुनावों को अहिंसात्मक दिशा मिलती है।

आंदोलन असफल होने के कुछ अन्य कारण भी हैं उसमें आपस की फूट और नेतृत्व का अभाव आदि प्रमुख है जो आंदोलनों को कमजोर, दिशाहीन और असफल बनाते है। आंदोलन करने के पिछे छात्रों का यह भी उद्देश्य हें कि, सभी लडकियों को प्रभावित करना। कभी-कभी स्वार्थ की पूर्ति आदि के कारण सभी आंदोलन असफल होते हैं। छात्रों की स्थिति ऐसी हैं कि, क्या करे? यह सवाल उनके मन में उठता है। नंदकिशोर कहता है - "एक ओर खंदक है, दूसरी ओर नुकीली पढ़ाई। एक और तानाशाही और सांप्रदायिकता है, तो दूसरी ओर व्यक्तिगत स्वार्थ और कलह। एक ओर आतंक है तो दूसरी ओर घृणित जातिवाद और फिरकापरस्ती--- आखिर हमारे जैसे लोग किधर् जाये।"[30] इसी स्थिति में नंदकिशोर जेसे छात्र आंदोलनों से अलग रहना चाहते हैं, तटस्थ ढंग से सभी चीजों को देखना चाहते हैं।

शिवप्रसाद सिंहजी यहाँ आंदोलनकी असफलता एक अदृश्य वर्ग पर मढाते हैं। छात्र अशान्ति और युवा विद्रोह की गलत दिशा में फंसते रहने के विभिन्न संदर्भ देते हैं। उपन्यासकार मानते है कि युवाछात्रों की भटकती हिंसक क्रिया और चीख पुकार तथा नारेबाजीयों के मूल में जाति वर्ग, स्थान आदि पर टिकी राजनीति दोषी है। उपन्यासकार को यह भी चिंता है कि, अगर राजनीति शिक्षा संस्थाओं में हस्तक्षेप बढ़ता गया या इसे नहीं रोका गया तो शिक्षा व्यवस्था अर्थहीन बनने के लिए देर नहीं लगेगी। अगर युवाछात्र सही दिशा से विद्रोह करेंगे तो उनकी प्रशंसा होगी छात्रों के संघर्ष पर नयी पीढ़ी का निर्माण आधारित है, अगर उन्हें सही दिशा नहीं मिली तो आनेवाली पीढी पर इसका असर जरुर होगा। आनेवाली नयी पीढी को बचाने के लिए इसी पीढी के विकल्प को उलटना-पलटना या सही दिशा देना अनिवार्य है।

युवाछात्र आंदोलन के बारे में लेखक को पूरी सहानुभूति है। मगर छात्रों के प्रश्न हो या हिंदी भाषा प्रश्न हो सभी जगह छात्र सर्वत्र अपना बचाव करके एक शौकिय तेवर के साथ लडाई लडते हुए नजर आते हैं। अपने प्रश्नो को ठिक समझकर उसे सुलझाने का प्रयास करने के बजाय किसी राजनीतिक दल के साथ बंट जाते हैं। और उँचे होटलों में चलनेवाले कुत्सित व्यापारों का अंग बनते हैं। ऐसे युवकों का लेखक ने पर्दाफाश किया है। लेकिन रामानंद या हरिमंगल जैसे छात्रों के बारे में उन्हें पूर्ण सहानुभूति है, क्योंकि वे छात्र सामाजिक सर्जना से जुडे हैं। इसीतरह के छात्रों को हमारे समाजकी विसंगतियाँ दुर्बल बनती हैं।

इस उपन्यास में शिवप्रसादजी द्वारा आंदोलनाकरी छात्रों की प्रवृत्तिपर प्रकाश डाला गया है। यहाँ हिंदी भाषा को लेकर अँग्रेजी के विरोध में आंदोलन खडा किया गया है। अँग्रेजी साइन बोर्ड तोड

दिये गये, हैं, दूकानों की तोड-फोड कर दी गयी है, लोगों का मुँह काला कर दिया गया है। शांतिपूर्ण निकले आंदोलन को हिंसात्मक दिशाको मुडाया है। आंदोलन के नामपर दुकानों को लूटा गया, फलों की टोकरियों पर हाथ साफ किये, पार्सल कार्यालय के सामानों को तितर-बितर कर दिया। बाजार और शिक्षाएँ संस्थाएँ बंद कर दी गयी, ट्रेनों का आना जाना रुकवा दिया। एक गाडी को प्लेटफॉर्म से लगभग 200 गज पहले ही रोक लिया और गाडी के इंजनों पर कब्जा करके उसपर लाउडस्पीकर फिट कर भाषण देना शुरु किया। तोडे गये नामपटों को तथ्यों की तरह बिछाकर आंदोलनकारी उसपर बैठकर सुस्ताने लगे। कुछ लोग साइनबोर्ड अपने हाथों से निकालने के लिए तैयार हैं और नये हिंदी में साइनबोर्ड बनवाने के लिए तैयार है, अंग्रजी में लिखे साइनबोर्ड कुछ घंटों पहले सजे-सजाये थे, वह सूखे पत्तों की तरह टूट पडे। इसतरह इन सभी प्रसंगों से छात्रों की विद्रोही और हिंसक प्रवृतिपर प्रकाश पडता है। आंदोलन असफल होने का यह एक कारण है कि, सही दिशा से आंदोलन नहीं चलाये जाते हैं।

छात्रों पर हो रहे पुलिस के अत्याचारों का चित्रण लेखक ने यहाँ किया है। छात्रों पर लाठीमार करना, अश्रुगोलों का प्रयोग, गिरफ्तारी, गोलीओं का अस्तेमाल आदि कारणों से छात्र संतप्त होते हैं और हिंसक बनते हैं। छात्रों को गिरफ्तार करके ट्रकों में बोरों के सामन रख देते हैं। छात्रों के साथ पुलिस बडे बेरहमी से पेश आती है। चारों तरफ भयग्रस्त मृत्यु दर्शन होते हैं। छात्रों के आंदोलन एवं विचारों को सत्ताधारी लोग समझ नहीं सकते और उनका सही दिशा दिग्दर्शन करने की बजाय उन्हें जेल भेजने का प्रयास करते हैं।

अंत में हम कह सकते है कि, सिंहजी ने आंदोलनाकारी छात्रों की सभी प्रवृत्तियोंपर यहाँ प्रकाश डाला है। छात्रों को हिंसक बनाने में शासन सहायक है। आंदोलनकारी छात्रों की सही स्थिति को इस उपन्यास में स्पष्ट किया हे। हरिमंगल और रामानंद तिवारी साहसी मिजाज के होनेपर भी अलग-अलग व्यक्तित्व है, जो भारतीय युवाशक्ति के बिखरते हुए तथा नये सामाजिक भाव-बोधों के निर्माण के लिए प्रतिश्रुत युवा मानस की सच्ची तस्वीर पेश करते हैं। हरिमंगल के पास साहस है, मगर उसके साथ विवेक की मानसिकता नहीं है, और रामानंद जोखिम उठाने के लिए तैयार नहीं है। इसलिए दोनों की एक सीमा बनी हुअी है। इसमें युवाछात्रों की निरंतर बढती हुई गिरावट को उसकी समस्त वास्तविकता तथा पूर्णता को समीक्षक देख नहीं पाते हैं। समाज छात्रों के पतन के लिए जिम्मेदार है। रामानंद चाहता है कि, छात्रशक्ति मानवीयता का रक्षण करे।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत उपन्यास "गली आगे मुड़ती है" छात्र आंदोलनपर प्रकाश डालने मं सफल रहा है। इस उपन्यास में विद्राही हरिमंगल की असफलता और रामानंद तिवारी की आत्मभीरुता भावनात्मक स्वीकार का ही परिणाम लगती है। इसमें युवाछात्र आक्रोश का आधा-अधूरा साक्षात्कार ही हुआ है। साथ ही काशी की संस्कृति का चित्रण भी देखने को मिलता है, जिसके सामने युवा छात्र आक्रोश की महत्ता कमजोर हो गयी है।

लाल-पीली जमीन – गोविंद मिश्र – 1976

गोविंद मिश्रजी के "लाल पीली जमीन 1976 में केशव जैसे दुर्बल व्यक्ति की परिवर्तित मुद्रा पर प्रकाश डालकर उसकी सामाजिक जड़ता और सुविधा भोगी स्थिति को तोडनेवाली प्रवृत्तिपर गहराई से सोचा है। यहाँ यह भी दिखाया गया हैं, कि सामाजिक जड़ता ने ही केशव के मनोबल को तोड डाला है।

गोविंद मिश्रजीने यहाँ यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि, शिक्षा-क्षेत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण आज की युवा-छात्र शक्ति आंदोलन की तरफ मुडने लगी है। ये आंदोलन केवल विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों में ही न होकर स्कूलों में भी खडे हो रहे हैं। प्रस्तुत उपन्यास में स्कूल के वर्तमान प्रिन्सिपल के रिटायर होने पर इसी स्कूल के किसी अध्यापक को स्कूल का प्रिन्सिपल बनाने की अपेक्षा व्यवस्थापन ने बाहरी व्यक्ति को स्कूल का प्रिन्सिपल बनाया। इस खबर को सुनते ही स्कूल के छात्रों में तथा स्कूल के पूरे परिवेश में बेचैनी छायाी।

आज-कल छात्र शक्ति का फायदा सभी राजनीतिक पार्टी के लोग उठाना चाहते हैं। छात्र शक्ति जुलुसों और चुनावों के समय भागदौड मचाने के लिए उनके काम आती है। ऐसी ही छात्रों की शक्ति को हथिया लेकर नेता लोग अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। पिछले चुनाव में बोस साहब ने युवाछात्र शक्ति से अधिकाधिक मदद ली थी। मास्टर कंठी जैसे आदर्शवादी, शिस्तप्रिय, स्कूल के प्रति ईमानदार व्यक्ति को हटाकर एक नये व्यक्ति को व्यवस्थापन ने प्रिन्सिपल के रुप में चुना जो छात्रों को बिलकुल मंजूर नहीं था। इस घटना से अन्य अध्यापकों में भी तनाव फैला जाता है। अपने ऊपर हुए अन्याय के खिलाफ संघर्ष करने के लिए मास्टर कंठी आमदा होते हैं।

आज-कल छात्र शक्ति को उकसाने का काम बाहरी शक्तियाँ कर रही हैं। इस बाहरी शक्तियों का अच्छा उदाहरण कल्लू है। वह हजेरी के समय अपने सभी साथियों के साथ स्कूल

के कमरों में घुस जाता है। उन्होंने अध्यापकों को आराम करने को कहकर छात्रों को जुलुस में शरीक करवाया। कैलाश और उसके साथियों के साथ सभी कक्षा के छात्र बाहर आकर प्रार्थना-स्थल पर मौजुद हुए।

इस आंदोलन का नेता कैलाश था जो इसी स्कूल की ऊँची कक्षा में पढ़ता था। वह छात्रों से कहता है – "हमारे पूज्य प्रिन्सिपल साहब रिटायर हो रहे हैं। उनकी जगह पर बाहर से कोई लाकर हमारे ऊपर लादा जा रहा है। पत्ता नहीं वह आदमी कैसा हो? हमारे स्कूल में एक-से-एक आला दर्जा मास्टर है। उनमें से क्यों नहीं किसी को बनाया जाता? आज हम इसी के खिलाफ लडेंगे। युवा-शक्ति की दीवारें तोडना आसान नहीं। व्यवस्थापन के खिलाफ हम अपनी शक्ति प्रदर्शित करेंगे।" कैलाश कहता है – लोगों को दिखा देना है कि, छात्रों की एकता में कितनी ताकत हैं और उनकी बात को एकदम ठुकराया नहीं जा सकता --- बोलो – बोलो छात्र एकता।"[31] चारों तरफ जिंदबाद के नारे गुंजने लगे।

युवा छात्र शक्ति में बदले की भावना तीव्र होती है। नवीं कक्षा का मानीटर रामधवनसिंह छात्रावास का नेता था। वह छात्रावास के छात्रों पर होनेवाले अन्याय को वाणी देने के लिए मंचपर आकर कहता है – "छात्रों को बुरी तरह दबाया जा रहा है। होस्टल में अच्छा खाना मिलना तो दूर हमें भरपेट खाना भी नहीं मिलता हमारे खाने पीने के दिन हैं। हमारी बाढ मरी जाती है, दिमागी शक्ति पूरी तरह विकसित नहीं हो सकती। ऊपर से बाहरी प्रिन्सिपल को हमारे ऊपर तादना या सरासर ज्यादती हैं"।[32] इस धांधले बाजी के खिलाफ छात्र-शक्ति संघर्ष करना चाहती है। इस जुलुस में छात्रों की नारेबारी अधिकाधिक प्रभावित होकर उभरने लगती है। छात्र एकता जिंदाबाद, धांधलेबाजी नहीं चलेगी, बाहरी आदमी नहीं चलेगा, पार्टीबाजों स्कूल छोडो, होस्टेल के लडके भूखे है, राशन हमको पूरा दो। आदि घोषणाओं से आकाश गुंजित हो उठा था जिसमें छात्रों की मांगे निहित थी।

छात्रों का यह आंदोलन हिंसक बन जाता है। इसमें मारकाट, पथराव, खून-खराबा, अग्निकांड, तोड-फोड, शुरु होकर आंदोलन गलत दिशा को पकडता है। केशव के नेतृत्व में छात्रों का जुलुस स्कूल के प्रेसिडेंट बोस के बंगले की तरफ मुडता है। नारेबाजी बुलंद बनी। भुंकनेवाले कुत्तों पर पथराव करनेवाले छात्रों को उद्देश्यकर उनके लीडर उन्हें गांधीजी के शांतीपाठ को पढाते हुए कहते हैं – "ए --- ये सब पत्थरबाजी नहीं --- हम सिर्फ शांति प्रदर्शनकारी हैं --- गांधीजी की अहिंसा याद राखो।"[33] गांधीजी के अहिंसा तत्वपर निकले इस छात्र-आंदोलनने हिंसात्मक रुप धारण किया। पुलिस की अमानवीय हरकतों ने आंदोलनकारियों को और भी हिंसक

बनाया। जिलाधीश के बंगले पर गये इन आंदोलन कारियों को बंगले के बाहर ही रोका गया। बंगले के दरबान की लाठी छीनकर जुलुस को आगे बढने का इशारा किया। दरबान की सहायता लिए आये दो वर्दीवालों को पीटा गया। जिलाधिश का जुलुस के सामने न आने पर छात्रों ने गालीगलौज शुरु किया। "कलक्टर साले बाहर आवो।"[34]

इस हादसे का समाचार मिलते ही पुलिसों का जिलाधिश के बंगले की तरफ आना, छात्रों में हल्की सी भागदौड मचना, केशवद्वारा भागने का रास्ता खोजते रहना, सुरेशद्वारा जीप को जलाना, ओर पथराव की आज्ञा देना, पथराव की शुरुवात होते ही पुलिस मॅजिस्ट्रेट द्वारा छात्रों की पीटाई का आदेश दिया जाना, छात्रों द्वारा पुलिस मॅजिस्टेट को पीटना जुलुस और पुलिस में टकराहट का शुरु होना, भयावह हत्याकांड का सिलसिला जारी रहना, छात्रों की लाशें कंपाऊण्ड के बाहर बिखरी हुआी दिखाई देना, जुलुस में बाहरी शक्ति का घुसना, लूटपार करना, बसों को जलाने का प्रयत्न करना, बस कर्मचारियों को पीटना, एस्.पी.के आने पर कातिलों का भाग जाना, चंद छात्रों को गिरफ्तार किया जाना आदि घटनाओं के साथ छात्रांदोलन से निर्मित हिंसात्मकता और पुलिसों की ज्यादतियों पर प्रकाश डाला गया है।

छात्र–शक्ति का फायदा हर नेता उठाता है। बोस बाबू इसी स्वार्थी नेता का प्रतीक है। वह ऊपर से झूठी सहानुभूति दिखाकर छात्रशक्ति से फायदा उठाना चाहता है। छात्रों की सभी शर्तों को स्वीकार करते हुए बोस बाबू कहते हैं – "मैं यहाँ होता तो मामला बिगड नहीं सकता। मैं उन्हें अपने घर बुलाकर बिठलाता, मिठाई खिलाकर उनसे बात करता --- प्यारे बेटों --- ये अच्छे लडके हैं -- कोई खराब नहीं है, उन्हें प्यार से समझाया जा सकता है --- किसी ने बहका दिया तो बहक गये --- इन मासूमों की नादानी से उन पर कैसे–कैसे कहर बरसाये गये। --- ये मासूम कच्चें --- हमारे बच्चें।"[35] झूठी सहानुभूति दिखाकर वे रोने भी लगे। नेताओं की स्वार्थी नीति के परिणाम स्वरुप छात्र आंदोलन दबाये भी जाते हैं। बोस के साथ की मिटींग समाप्त होते ही छात्र अपने मांगों की घोषणाएँ शुरु कर देते हैं। छात्रों ने उनके नेता को बोस साहब के सामने अपने विचार प्रस्तुत कर देने की बातें शुरु कि, इस पर चतुर बोस कहते हैं – "प्यारे बेटों मंचपर आने की क्या जरुरत है, जब हम हैं? जिसके बच्चे इस समय हिरासत में हैं, उन्हें छुडवाकर मैं दम लूंगा। ये मैं वादा करता हूँ।"[36] वे चतुराई से कहते है कि, बाकी बातें हमारे बस की नहीं हैं। मैं सरकार के सामने आपकी मांगें पेश करुँगा। बोस साहब छात्रों को अपने स्कूल लौटने का, पढने का और देश की बागडौर को अपने कंधे पर उठाने का ऐलान करते हैं। अपनी चतुराई से बोस साहब ने असंतुष्ट छात्र शक्ति को संतुष्ट करने का यहाँ प्रयत्न किया है।

छात्र शक्तिद्वारा निर्मित आंदोलन का फायदा विपक्षी दलोंद्वारा उठाकर जनता में हवा बांधने के लिए इन घटनाओं का वे उपयोग करते हैं। अंत में छात्र शक्ति की जय होती है, और मास्टर कंठी को प्रिन्सिपलबना दिया जाता है।

इस उपन्यास में यह भी दिखाया है कि, आज की छात्र-शक्ति अराजकता कि तरफ मुडती जा रही है। आजके छात्र नकल उतारकर परीक्षाओं का बेडा पार करना चाहते हैं। अपना रोष जमाकर अध्यापकों को डरा धमकाते हैं। शिवमंगल नामक एक गुंडा छात्र इसका अच्छा उदाहरण है, जिन्होंने कापी उतारने के लिए प्रतिबंध लगानेवाले मास्टर कंठी को मौत के घाट उतारा है। बहुसंख्य छात्रों को अपना हथिया बनानेवाला छात्र शिवमंगल आज के अनेक छात्रों का प्रतिनिधित्व करता है। इस उपन्यास में छात्र आंदोलन की विभिन्न शक्लें दिखाई है। डॉ. चंद्रकांत बंडिवडेकर के मतानुसार "लाल पीली जमीन" हिंदी के कुछ चुने हुए सामाजिक उपन्यासों की पंक्ति में रखा जा सकता है। व्यक्ति और सामाजिक परिवेश की गहन टकराहट, व्यक्ति के व्यक्तित्व के संपूर्ण गठन को अर्थात उसकी वृत्तिप्रवृत्तियों, आचरण के मूल्यों और व्यवहारिकता को तथा शील को गहन रुप में किसप्रकार प्रभावित करती है। "लाल पीली जमीन" इसको उद्‌धृत करता है।[37] डॉ. वाय्. बी. धुमाळजी के मतानुसार – " गांधीजी के अहिंसात्मक प्रणालीपर निकाले गये छात्र आंदोलन के जुलुस में अंत में हिंसात्मकता कैसे प्रविष्ट होती हैं, इसका अच्छा सबूत हैं , "लाल-पिली जमीन"।[38] गोविंद मिश्र की औपन्यासीक "लाल पीली जमीन" हिंदी के कुछ चुने हुए सामाजिक उपन्यासों की पंक्ति में रखी जा सकती है। यह उपन्यास समसामायिक छात्र वर्ग में व्याप्त हिंसा और कमकुंठाओं के कारणों की तलाश करता है। आज की छात्र शक्ति जातिवाद पर आधारित सामंतवादी शक्ति है। जिनकी अपने गाँवों में जमीनदारी हैं और शहरों में अपनी प्रतिष्ठा बनाने के लिए हिंसात्मक शक्तियों को पालती है, जिनकी जरुरत अपनी राजनीति चलाने के लिए राजनेतओं को पड़ती है। और जिनकी सुरक्षा पुलिस करती है। इस उपन्यास में देश के बच्चे, किशोरों के सामने फैले अर्थविहीन जीवन का चित्रण किया है। मध्य-वर्गीय छात्रों के सामने अपनी आशा-आकांक्षाओं को पूरी करने के लिए हिसां के मार्ग के सिवा अन्य कोई मार्ग दिखाई नहीं देता है। हिंसा की उनका सवबकुछ है हिंसा ही उनकी सुरक्षा है। गरीब अशिक्षित बच्चों के लिए उनका शरीर और उनका साहस उनके लिए सबकुछ है। इसी के बल इस संसार में किसी तरह वे खड़े हैं।

यह उपन्यास उन मध्यमवर्गीय पात्रों को उजागर करता है, जिसमें जर्जर होते हुए पारिवारिक संबंध, लडकियों का उदासपन, लडकों का दु:साहस और आत्महत्या की ओर बढ़ती प्रवृत्ति का चित्रण आया है। इस उपन्यास के नायकने जिंदगी के उन तमाम दु:खो को सहा है, जो जोवन से

विसंगत है। जहाँ हर रिश्तों का अर्थ बदल गया है, धर्म के नामपर लंपटता और गुंडई आयी है। जाति के नामपर गरीबों को चूसा जा रहा है। इससे जहाँ विरान लाल (हिंसा) और पीली (पीडा की) धरती पैरों के नीचे रह गयी है। इन अत्याचारों को उजागर करना ही लेखक उद्‌देश्य है, जो अत्याचार राजनीतिक गुंडों के द्‌वारा हो रहे हैं।

इस उपन्यास में जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत किया है। जीवन की घुटन, मजबूरी इस भयानक हिंस्त्र शक्ति के सामने टूटते हुए बिखरे जाने के सिवा और कुछ नहीं इसपर प्रकाश डाला है।

"सारे संबंधो और मानवीय जीवन के स्त्रातों की एक ही परिणति हैं, इस लाल-पीली जमीन की विशिष्ट मिट्‌टी के मिलने की। यह मिट्‌टी अपने रंग में अपने कठोर साँचे में सबको ढालती है। इस मिट्‌टी की पहचान उपन्यास के मर्म को समझने की एक महत्वपूर्ण कूंजी है।"[39] यह एक संभावनाओं से परिपूर्ण जीवन की कथा है।" जो सामायिक समाज के उलझे और गुंथे हुए गहन सूत्रों का संकेत विराट आशय के साथ जुडी है।

"यह उपन्यास युवा मानस की उस व्यग्रता का आभास कराता है, जिसके निकट स्वीकार या निर्माण, सत्य ओर निष्ठा के सभी रासते बंद हैं, और नकार या ध्वंस के रास्ते आत्यंतिक रुप से खुले है। जिसके पीछे जाति वर्ग, राजनीति की संकीर्ण प्रेरणाएँ हैं - युवा चेतना की समाप्ति की ही दिशा है।[40]

निष्कर्ष :

"लाल-पीली जमीन" गोविंद मिश्र की सफल रचना है। इसमें युवा, संघर्ष एवं भय और असुरक्षितता से तंग आये लोगों का चित्रण किया है। इस उपन्यास का पूरा विश्व जंगली, हिंस्त्र, भ्यावह और मूल्यहीन होने पर भी कहीं भी भडकीला नहीं है। न कही नाट्यात्मकता का सहारा लिया गया है। जाति-पाति, समाजिक स्थान और प्रतिष्ठा आर्थिक औकात और शक्ति मानवीय मूलभूत प्रवृतियां और परिवेश का दबाव राजनीतिक दांव-पेच-इनका कुछ जटिल रसायन उपन्यास में मिलता है।

<u>**उखडी हुई आँधी**</u> – <u>सुदर्शन मजीठिया</u> – <u>1979</u>

छात्र आंदोलन और उसकी सफलता , असफलता, सार्थकता–निरर्थकता तथा उद्‌देश्य विहीनता आदि को केंद्र में रखकर "गली आगे मुड़ती है", "अपना मोर्चा", "पक्षधर", "उखडी हुई आँधी", "नयी दिशा", आदि उपन्यास लिखे गये हैं। "उखडी हुई आँधी" में सुदर्शन नजीठियाने छात्र–अध्यापकों के नवनिर्माण आंदोलन का चित्रण किया है। उन्होंने आंदोलन को दो भार्गे में बाँट दिया है। एक यह आंदोलन है जो दृढ संकल्प, साहस और पारस्पारिक सहयोग के साथ महत उद्‌देश्य के लिए चलाया जाता है। प्रा. अहमद इस आंदोलनपर भाष्य करते हुए कहते हैं – "यह एक ऐसा आंदोलन था जिसने गुजरात में शासक पक्ष की जडें हिला दी, दिल्ली के सुल्तानों को शिकस्त खानी पड़ी। इस आंदोलन में किसी राजनीतिक पार्टी का हाथ नहीं था। जो काम विरोधी पक्षों का था और जिसे उन्होंने नहीं किया, उसे शिक्षकों और विद्यार्थियों ने किया। शिक्षक पहली बार अपने घेरे को तोड़कर बाहर आये।"[41] लेकिन इसमें कुछ प्रलोभन मिले जिसके कारण ये आंदोलन असफल बने। प्रा. अहमद इस आंदोलन में शरीफ हुए लेकिन उन्हें छात्रों के अविवेकी, अनुत्तरदायी निर्णय से दुःख हुआ है। इस बात को स्पष्ट करते हुए प्रेमकुमार कहते है कि, "एक शक्तिशाली धारा भ्रष्टाचार के रेमिस्तान में डूब गयी। एक जर्बदस्त आँधी दो–दो शानदार विज्य प्राप्त करने के पश्चात स्वयं अपने ही हाथों समाप्त हो गयी।"[42]

राजनीतिक व्यवस्था और भ्रष्टाचार का चित्रण इस उपन्यास में आया है। सरकार बदलती रहती है, आये दिन नये–नये गटों का निर्माण होता है, परंतु राष्ट्रीय समस्या हल नहीं हो रही और छात्र आंदोलन से जुडे प्रश्न पूरे देश के आंदोलन कारियों के प्रश्न हैं। जनवरी 1974 से मार्च 1974 के बीच गुजरात में चले जनांदोलन को इस उपन्यास का आधार बनाया है। छात्र और अध्यापकों के नवनिर्माणकारी आंदोलन को दो भागों में बाँटा गया है। गुजरात के सत्ताधिशों की जड़ें हिलाने का विपक्षी दालों का काम इस आंदोलन में छात्र और प्राध्यापकों ने किया। "गुजरात की तत्कालीन भ्रष्ट राजनीति और अव्यवस्थित समाज–व्यवस्था के दर्शन प्रस्तुत उपन्यास के आंदोलन के माध्यम से होते है।"[43]

इस आंदोलन का उद्‌देश्य महत् है। यह आंदोलन दृढ संकल्प, साहस और पारस्पारिक सहयोग से चलाया हुआ नजर आता है। इस आंदोलन में किसी राजनीतिक पार्टी का सहयोग नहीं था। सरकार की कमियों को पाट ने का काम जो विपक्षी दल नहीं कर पाये, उसे छात्रों और अध्यापकों ने करना निश्चित किया। प्राध्यापक प्रारंभ में ही अपने घेरे को तोड़कर आंदोलन में शरीक हुए।

इस आंदोलन को दबाने की सरकार की चतुराई पर भी प्रकाश डाला हैं। छात्रों को "मास प्रमोशन का प्रलोभन दिखाकर इस आंदोलन का जोश कम कर दिया गया। आंदोलन स्वार्थ के भटकाव में गोते खाने लगा। आज कल कअी आंदोलन नीजी स्वार्थ के घेरे में असफल बनते जा रहे हैं।

प्रो. अहमद को इस उपन्यास के केंद्र में रखकर तत्कालीन गुजरात सरकार की भ्रष्ट नीति, अव्यवस्थित समाजव्यवस्था, जनता का सरकार के खिलाफ आक्रोश, आंदोलन में निहित हिंसात्मकता, आंदोलन में दिखाई जानेवाला प्रलोभन आदि का चित्रण यहाँ किया गया है। गलत रास्ता अपनाने पर स्वार्थ की बुनियाद पर खडे आंदोलन असफल होते रहते हैं। जिस आंदोलन की दिशा सही होती है, जिसमें राजनीति की बदबू नहीं रहती ये आंदोलन सफल होते हैं, इसपर भी यहाँ प्रकाश डाला है। "लेखक की दृष्टि आंदोलन से संबध्द घटनाओं पर रहने से वह उसके बुनियादी गहरे अर्थों की तलाश और विश्लेषण की तह तक उतर नहीं पायी।"[44]

निष्कर्ष :

सन 1960 के बाद जो भी छात्र आंदोलनपर उपन्यास लिखे गये हैं उनमें छात्र शक्ति–आंदोलनपर गहराई से विचार किया गया है। आज के विश्वविद्यालयों में एवं अन्य शिक्षा क्षेत्रों में बढ़ती बेचैनी, छात्र उपद्रव, शिक्षालयों में हिसा, गुण्डई आदि का चित्रण विस्तार से इन उपन्यास में मिलता है। अहमदाबाद के गुजरात विश्वविद्यालय, राँची और गढवाल विश्वविद्यालय में हुए छात्र आंदोलन की गवाही इन उपन्यासों के माध्यम से मिल सकती है। सन 1968 के आसपास पूरे विश्व में छात्र आंदोलन का दौर शुरु हुआ। इसी के परिणाम स्वरुप ही हिंदी के उपन्यासों में इस विषयपर अधिक मात्रा में सोचा गया। कुलपति को घिराव डालना, विश्वविद्यालयों की तोडफोड करना, अग्निकांड, मारकाट, हत्याकांड, हडताल, तालाबंदी को प्रश्रय देना, काफी उतारने के प्रतिबंध में हत्याकांड करना, पूंजीपति शिक्षा व्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाना, भाषा विषयक आंदोलन को छेडना आदि कअी प्रकार के छात्रआंदोलन हिंदी उपन्यासों में चित्रांकित किये गये हैं।

इन उपन्यासों में चित्रित अधिकांश आंदोलन गलत रास्ते पर मुडे हुए देखने को मिलते हैं। जो आज के छात्र आंदोलन के प्रवाह लगते है। छात्र आंदोलन को यदि सही दिशा मिले, इन आंदोलनों में विघातक शक्तियों का प्रवेश न हो पाये तो छात्र–आंदोलन अवैध बातों को ठिकाने पर लगाने का कार्य सफलता के साथ कर सकते हैं। इसका भी पत्ता यहाँ चलता है। आज छात्रों के सामने कोई मागदर्शन या आदर्श न होने के कारण उनके आंदोलन असफल भी बनते जा रहे हैं।

आज पंचवर्षीय चुनावों से जनतांत्रिक चेतना मजबूत होने लगी है। अपने अधिकारो के प्रति हर छात्र अधिक सजग होने लगा है। संगठित शक्ति के रुप में छात्र आंदोलन जोर पकड़ने लगे हैं। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद", "छात्र-भारती" आदि छात्र संगठनों का निर्माण होता जा रहा है। इन छात्र संगठनों द्वारा सामाजिक सुधारवादी, परिवर्तनशील, क्रांतिकारी, निषेधात्मक, भाषीक आंदोलनों को चलाने का काम हो रहा है। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण शैक्षिक समस्याओं का निराकरण, रचनात्मक कार्यप्रणाली पूंजीवादी शिखा प्रणाली के टकराहट आदि के साथ-साथ आज का छात्र अधिक समाजभिमुख बनता जा रहा है। छात्र-हित के लिए बाधक शक्ति के खिलाफ, उच्च शिक्षालयों में स्थित प्रवेश-प्रणाली के कारण आनेवाली कठिनाइयों के खिलाफ, शिक्षालयों में होनेवाली अनहोनियों के खिलाफ, फीस संबंधी कुलगुरु की अवैध नीति के खिलाफ, शिक्षा क्षेत्र की बढती कुप्रवृत्तियों के खिलाफ, विनाअनुदानीत शिक्षा प्रणाली के खिलाफ, पिछडे छात्रों को मिलनेवाली सरकारी छात्रवृत्ति एवं छात्रवास की असुविधाओं के खिलाफ, शिक्षा-क्षेत्र के भ्रष्टाचार के खिलाफ आज अनेक छोटे-बडे आंदोलन छात्रों द्वारा चलाये जा रहे हैं। केवल आंदोलन के माध्यम से अशांति का निर्माण करना यहीं उद्देश्य इन छात्र आंदोलनों का नहीं है बल्कि छात्र आंदोलन के कारण विधायक कार्य भी होते जा रहे है।

प्रस्तुत अध्याय में चित्रित उपन्यासों में उपर्युक्त बाते कम अधिक मात्रा में जरुर देखने को मिलती हैं। युवा-छात्र असंतोष और विद्रोह से उत्पन्न संकट का जिक्र इन आलोच्य उपन्यासों में मिल जाता है। इन उपन्यासों के साथ-साथ शरद देवडा के "कालेज स्ट्रीज के नये मसीहा" में बेकारी के कारण विद्रोही बनी युवाछात्र शक्ति की सही दिशा की ओर संकेत किया है। कहीं बेकारी को झेलते युवाछात्र वर्ग के गुमराह हो जाने की ओर संकेत किया गया है, तो कहीं सार्थक और "जेनुइन" विद्रोह को प्रस्तुत किया है। इन आलोच्य उपन्यासकारों के उपन्यासों से यह ध्वनित होता है कि यदि छात्र-पीढी का आक्रोश और संघर्ष निर्माण के लिए है तो इसका समर्थन आवश्यक है। बिचौलिया शक्ति के प्रवेश से छात्र आंदोलन सही दिशा छोडकर गलत रास्ते पर कैसे अग्रसर होते जा रहे हैं, इसपर भी यहाँ गहराई से चिंतन किया है।

इन सभी आलोच्य उपन्यासों में वर्तमान युवक-छात्रों का आक्रोश, विश्वविद्यालयीन असंतोष और अशैक्षिक परिवेश उभरकर सामने आता है। इन दोनों उपन्यासों में आज के युवकों की समस्याएँ और नवयुवकों के अपरिपक्व अनुभव आदि का यथार्थ चित्रण देखने को मिलता है। इन उपन्यासकारों की वैचारिक प्रौढता, गंभीर विश्लेषण, रचनात्मक शैली आदि के दर्शन हमें यहाँ होते हैं। कहीं-कहीं पर इन उपन्यासों में विषय की पकड में थोडीसी शिथिलता भी देखने को मिलती हैं।

संदर्भ सूची

1 डॉ. वायु. बी. धुमाळ, साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960-1980)अप्रकाशित शोधप्रबंध, पुणे विश्वविद्यालय 1985 पृ. 76

2. वही पृ. 77

3. विश्वंभरनाथ उपाध्याय, पक्षधर, प्र. सं. 1971 पृ. 20

4. वही पृ. 22-23

5. वही पृ. 75

6. वही पृ. 87

7. वही पृ. 212

8. डॉ. वायु. बी. धुमाळ, साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960-1980), अप्रकाशित शोधप्रबंध, पुणे विश्वविद्यालय 1985 पृ. 80

9. विश्वंभरनाथ उपाध्याय, पक्षधर, प्र. सं. 1971 पृ. 254.

10. संपादक भीष्म साहनी, रामजी मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, आधुनिक हिंदी उपन्यास, प्र. सं. 1980, पृ. 325

11. वही पृ. 328

12 काशीनाथ सिंह, अपना मोर्चा, रचना प्रकाशन इलाहाबाद प्र. सं. 1972, पृ. 69-70.

13. वही पृ. 22

14. वही पृ. 30

15. वही पृ. 39

16. वही पृ. 12

17. संपादक भीष्म सहानी, रामजी मिश्र, भगवती प्रसाद निदारिया, आधुनिक हिंदी उपन्यास, प्र.सं. 1980, पृ. 333

18. डॉ. वाय्.बी. धुमाळ, साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासोंका प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960–1980) अप्रकाशित शोधप्रबंध, पुणे विश्वविद्यालय 1985 पृ. 81

19. डॉ. वचनदेव कुमार "अनुवाक्" हिंदी विभाग राँची विश्वविद्यालय, अंक 3, सन 1979 पृ. 12

20. भैरवप्रसाद गुप्त "नौजवान" रचना प्रकाशन इलाहाबाद, प्र.सं. 1972, पृ. 36

21. वही पृ. 108

22. वही पृ. 109–110

23. वही पृ. 144

24. वही पृ. 135–136

25. वही पृ. 206

26. वही पृ. 207

27. वही पृ. 208

28. संपादक डॉ. रामदश मिश्र, हिंदी उपन्यासों के सौ वर्ष, गिरनार प्रकाशन, पिलाजी गंज प्र.सं. 1984, पृ. 122

29. वही पृ. 123.

30. शिवप्रसाद सिंह, गली आगे मुडती है, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली व्दि.सं. 1991 पृ. 276

31. गोविंद मिश्र, लाल–पीली जमीन, राजपाल ऍन्ड सन्स दिल्ली, प्र.सं. 1976, पृ. 195–96

32. वही पृ. 197

33. वही पृ. 198

34. वही पृ. 200

35. वही पृ. 206

36. वही पृ. 208

37. डॉं. महिप सिंह, हिंदी उपन्यास समकालीन परिदृश्य, लिपि प्रकाशन दिल्ली, प्र. सं. 1980 पृ. 129

38. डॉं. वाय्. बी. धुमाळ, साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासोंका प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960-1980), अप्रकाशित शोधप्रबंध, पुणे विश्वविद्यालय 1985 पृ. 91.

39. संपादक चंद्रकान्त बांदिवडेकर, गोविंद मिश्र सृजन के आयाम, वाणी प्रकाशन, प्र. सं. 1990 पृ. 94

40. वही पृ. 106

41. संपादक डॉं. गोपाल, उपन्यास कहानी समीक्षा अंक, वर्ष 14, अंक-3, 1980 पृ. 44.

42. वही पृ. 44

43. डॉं. वाय्. बी. धुमाळ, साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासोंका प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन, (1960-1980), अप्रकाशित शोधप्रबंध, पुणे विश्वविद्यालय 1985 पृ. 94.

44. डॉं. पुष्पाल सिंह, हिंदी साहित्य आँठवा दशक, सुर्यप्रकाशन दिल्ली, प्र. सं. 1984, पृ. 82